भविष्य के लिए

हिन्दी ADDA

किरण राजपुरोहित नितिला

भविष्य के लिए

दिव्या का पारा अब सातवें आसमान पर था। आँखों से अंगारे बरस रहे थे। हाथ चाँटे के लिए उठा ही था पर बच्चे की निरीह और तनाव की सूरत देख कर थम गया। उफ! कह कर वह किताब को टेबल पर पटक उठ गई। एक तरह से उसको इशारे से मारा

गया चाँटा ही था। बारह साल का अर्चि सिर झुकाकर बैठ गया। ना ही माँ की तरफ देखा और ना ही कोई प्रतिक्रिया दी। दूसरी किताब आँखों के सामने खुली ही पड़ी थी। हाथ में पैन स्थिर ही था। बस टुकुर-टुकुर अक्षरों को ताक रहा था जैसे किताब के सवाल कोई गुत्थी हो और आँखों-आँखों से उनके भीतर उतर कर हल कर रहा हो। अर्चि का ये ढीठ रूप दिव्या को और चिढ़ा देता है। इसकी बजाय वो रोता या रुँआसा होता, सामने कुछ कहता या माँ के उठने पर कुछ हिलता-डुलता तो शायद उसका पारा कम रहता पर वो तो जैसे यही चाहता है कि इस तरह बन जाऊँ तो मम्मा अपने आप झक मार कर उठ जाएगी और उसे पढ़ना नहीं पड़ेगा। दिव्या ने दरवाजे तक पहुँचते-पहुँचते मुड़कर देखा तो पाया कि अर्चि आँखें बंद किए किताब पर सिर रखे था। वो झटके से मुड़ी फिर से डाँटने के लिए पर उसका बुझा सा तनावग्रस्त चेहरा देख पिघल गई पल में। कुछ पल यूँ ही निहारते रही उसे। कितना भोला मासूम है दुनियावी दौड़ से अभी निपट अनजान। ममत्व ने हिलोर ली और उसके बालों पर नरमी से हाथ फेरा। स्पर्श से झटके से आँखों खोली और उसे सामने पाकर फुर्ती से किताब के पन्ने पलटते लगा। गहरी थकान से थकी आँखें

दो घड़ी की नींद के एकाएक खुलने से पूरी तरह लाल बम हो चुकी थी।

बेटे पर बेहद दया उमड़ आई। सीने से चिपटा लिया। अपनी ही माँ से इतना भय! बेटे की पढ़ाई पर गुस्सा करने वाली दिव्या अब पछतावा करने लगी। पर वह भी क्या करे? कल इम्तहान है और एक पाठ अभी भी याद नहीं हुआ है। शाम के बाद जब सारे सवाल जवाब पूछ रही थी तभी उसे ये बात पता चली। घबराहट और गुस्से के मिले-जुले रूप को नियंत्रण कर फिर से वापिस पढ़ाने लगी। परीक्षा में कुछ छूट जाए ये उसे सहन नहीं। और इधर-उधर से नसीहतें भी मिलती रहती है कि माँ को बच्चों पर पूरा ध्यान देना चाहिए। माँ की हटक से ही बच्चे सुधरे रहते है। कक्षा में वैसे भी वह सातवें-आठवें स्थान पर झूलता रहता है। हर संभव कोशिश करती है कि पहले ही सब याद करा कर रखे लेकिन उसकी पढ़ाई के प्रति अरुचि के चलते लगातार, बहानेबाजी और टालने की प्रवृति के कारण इम्तहान आते-आते वह खुद तनावग्रस्त रहना शुरू हो जाती है। उठते-बैठते केवल पढ़ाना ही एक लक्ष्य रह जाता है। घर के कामों में फिर मन नहीं लगता बल्कि यूँ कि और कुछ भी अच्छा नहीं लगता जबसे

परीक्षाओं की तिथि स्कूल डायरी में लिख दी जाती है। तब वह कई तरह की प्लानिंग करने लगती और तनाव बढ़ने लगता। कई कामों में कटौती कर देती है। बाहर आना-जाना यथासंभव नहीं करती क्यूँ कि उसका ध्यान वहाँ भी अर्चि पर लगा रहता है। लगता है घर समय पर पहुँच जाए तो एक आध पाठ याद करा ही देगी या फिर रिवीजन ही सही।

कुछ तो हो ही जाएगा तो दिन सार्थक हो जाए। किसी तरह पढ़ाई जैसा कुछ भी न हो तो लगता है दिन पूरा निर्रथक ही गया। और अच्छी पढ़ाई हो पाना उसे इतना खुश कर देता है जैसे कोई बड़ी खुशखबरी मिलने पर खुशी होती है। इसी कारण घर पर आने वाले मेहमान भी धीरे-धीरे सुहाने कम हो गए। आए मेहमान भी जल्द चले जाए यही कामना रहती। बैठे मेहमान भी उसका मन बचे हुए घंटों को पढ़ाई में सैट करने की जुगत में रहता। ये कुछ अच्छा न लगता उसे कचोटता भी लेकिन बच्चे के लिए अपने इस कचोटपन को वह घाँटी मरोड़ पटक देती आसानी से। एक बार तो मेहमान ने यहाँ तक कह दिया कि आपकी तबियत ठीक नहीं है या कोई चिंता खाए जा रही है।

काफी देर से ऐसा लग रहा है कि आप खुद में है ही नहीं। सच ही तो है। पर उनसे कहा तो नही जा सकता ये। उस दिन तो खुद से घृणा भी हुई जब उसने किसी रिश्तेदार से कुछ बातें इसलिए नहीं शुरू की कि इससे बात और बैठक लंबी खिंच जाएगी, समय खराब होगा और इनके जाए बिना अर्चि को पढ़ाने नहीं बिठा पाएगी इसलिए हाँ...हूँ... करके बात खतम करना ही ठीक लगा। उन दिनों देव ने इशारा भी किया था कि तुम किसी मनोरोग से ग्रस्त न हो जाओ। इन्ही बातों के चलते रिश्तेदारों के प्रति अपनापन कम होने लगा और दोस्त-सहेलियों की संख्या में कमी हुई। पर वह इन बातों पर गौर नहीं करती। बच्चे के लिए बहुत कुछ करते हैं माँ-बाप। यही बात उसकी व्यावहारिक गलतियों पर पर्दा डाल देती या जान-बूझ कर डलवा देती।

जब कभी लगता कि तैयारी ठीक है तो जैसे सीने पर से मनों बोझ पल भर में काफूर हो जाता है। वह खुश रहती इससे तो बेटा भी कुछ सहज हो जाता। भय कम हो जाता। देव भी थोड़ी बोलने की जगह पा जाते और घर का पूरा वातावरण हल्का-फुल्का हो जाता। नहीं तो तीन जनों के परिवार में ही मायूसी-उदासी छायी रहती। उसके मूड पर ही घर भर का मूड निर्भर होता ये बात वह काफी पहले ही समझ चुकी है पर...। देव

उसे खूब समझाते कि बच्चे पर पढ़ाई का इतना दबाव मत रखो। उसे सहज ही पढ़ने दो अपनी रुचि से। दबाव के नतीजे अच्छे नहीं होंगे। होंगे तो भी फलदायी या प्रभावी नहीं होंगे। ये बातें तुम नहीं जानती हो क्या? वह खुद भी तो सिविल इंजीनियरिंग कर चुकी है। पढ़ाई और इम्तहान के दबाव-तनाव झेल चुकी है। जानती है कि उम्मीदों को झेलना और पूरा करना कितना कठिन है। पर वह भी क्या करे? उसके समय इतनी रस्साकशी नहीं थी, प्रतियोगिता नहीं थी।

कॉलेज में जाते-जाते कहीं कैरियर की दिशा तय होती थी। पर अब तो स्कूलों में ही कैरियर के हिसाब से विषय लेने और उस पर विशेषज्ञता प्राप्त कर लेने का जमाना है। श्रेष्ठ को भी नौकरी तो दूर की बात है केवल अच्छे स्कूल और कॉलेज में दाखिला ही मिल पाता है। शत-प्रतिशत धारियों की कमी नही है। लगता है सदियों से जीन्स में बसी मानव की प्रतिभा में अब विस्फोट हो गया हो इसी युग में। आगे की लड़ाई सौ फीसदियों के बीच ही रहती है। शेष तो न जाने कहाँ पतझड़ के पत्तों की तरह झड़ कर इधर-उधर हो जाते है। कितनी ही छोटी नौकरियों में कई डिग्रीधारी अपनी उमर के दिन पूरे करते दिखाई देते है और प्रतिभा का कुछ यूँ ही मरना होता है। उन में दुनिया के लिए कितनी निराशा भर जाती है कि सोच कर ही भय लगता है उनकी मनोस्थिति से। युग का ऐसा काला चेहरा सचमुच ही डराता है, सवाल खड़े करता है। ऐसे समय में अपने बेटे को पीछे कैसे रह जाने दे? जी जान से जोर लगा कर अपनी शत-प्रतिशत समझ को अपने इकलौते बेटे पर न्यौछावर करना चाहती है। उसके अलावा उसे और काम ही क्या है? और हो तो भी वह क्यूँ रखे काम? बेटे का भविष्य सबसे पहले है।

माँ को देख कर बेटा भी कभी गुमसुम कभी निराशा के बीच डोलता रहता है। पर वह जानती है कि यह दर्द कुछ समय का ही है। वह भी झेले और बेटा भी झेल ही ले। आखिर बेटे के सुखी भविष्य के लिए वह माँ होकर कुछ भी कर सकती है।

...कुर्सी पर बैठे हुए को उसने सीने से चिपटाया और उठाया तो उसने माँ की आँखों में झाँका जैसे कि पूछ रहा हो कि ये रूप सच है क्या? वह एकदम मुस्कुरा दी ताकि वह भी मुस्कुरा दे। उसकी मुस्कान कैद नहीं करनी है। सब कुछ उसकी खुशी के लिए है। तो उसे खुश भी रखना आवश्यक है और माँ पर विश्वास भी कि माँ को माँ ही समझे, निष्ठुर समझ कर विश्वास करना ही छोड़ दे, ऐसा नहीं चाहेगी। ...वह भी मायूस सा

मुस्कुरा दिया। एक दूसरे की मुस्कान ने सुकून दिया। उसे राहत मिली। चलो बेटे के दिल पर ज्यादा चोट नहीं थी। समय रहते चोट से उबार लिया। खूब जी भर के लाड़ लडाया। पूछा "नींद आ रही है? उसने हाँ कहा। "चलो सो जाओ आराम से। सवेरे जल्दी उठाऊँगी।"

सुबह-सवेरे से ही इस बात पर जद्दोजहद शुरू हो जाती है। रात से ही बेटे की पढ़ाई में डूबा मन-मानस यही बात लिए सवेरे फिर सवार हो जाता है उस पर। उसके लिए दूध और टिफिन तैयार करते समय भी यही कुछ घूमता रहता है कि दिन को कैसे क्या पढ़ाने का रहेगा। बल्कि स्कूल के लिए निर्देश भी थमा देती कि अगर खाली पीरियड मिल जाए तो बातों में समय नष्ट मत करना कुछ याद ही कर लेना या कोई होमवर्क बातें करते हुय भी पूरा कर ही लेना। समय का सदुपयोग भी हो जाएगा तो घर पर कुछ ज्यादा समय पढ़ाई पर दे पाएँगे।

बेटा उठता तो रात का उदासीपन उस पर हावी रहता। उठने में आनाकानी करता और हर काम की गति कम हो जाती। 'स्कूल को देर हो जाएगी' सुनते ही जैसे उसे करंट लगता और वह तुरंत खड़ा हो जाता। यह खोपड़ी स्कूल के नाम पर जागरूक है। यह भी तो अच्छी बात है बेटे में। वह खुश होकर बलइयाँ लेती। लाड़ लडाते हुए ही स्कूल के लिए तैयार करती। उदासी का झीना आवरण लाड़ की ऊष्मा से पिघल जाता और भोर का नया उजियारा पसर जाता। वह मानो जीत जाती मनचाहा पा जाती। फिर उसकी बातों का पिटारा खुल जाता। हाँ बेटा गुड्डू बेटा कहकर उसकी बातों का हुंकारा देती जाती। माँ की खुशी उसके सिर चढ़ कर बोलती मालूम होती। आखिर बच्चा ही तो है ना। कभी झूठा गुस्सा जताती और वह उसी सुर में जवाब देता खुशी से उछलते हुए। दिन भर तो पढ़ाई में लगाना पड़ता है। कुछ संवाद हो तो भी बातों में समय न गँवाने की घुट्टी पिलाती हूँ। देव ऑफिस की रहा लेते। अतिअभ्यस्त हाथों से सब काम निबटाकर बेटे का इंतजार करने लग जाती। कभी लगता है वह शेरनी हो गई है जो बच्चे के आते ही टूट पड़ेगी। कभी लगता है देव मुझ कसाई के हाथ बेटे को सौंप जाते है। कहीं बच्चा ही ऐसा ही कुछ ना सोचने लगे और देव भी। पर हाँ देव उसकी बातों के बीच बोलने से कतराते तो है और कई बार हल्का सा विरोध भी करते है पर वह ध्यान

नही देती और दुबारा वो कहते नही। सचमुच वह कहीं गलती तो नहीं किए जा रही है? शहर के सबसे अच्छे स्कूल में बेटे को प्रवेश बहुत ही मुश्किल से करा पाए थे।

पूरे दो साल जूझे थे। बहुत अच्छे अंक होने बावजूद कई सिफारिशों से काम हो पाया था। ये समझ ही नहीं आया कि अंक की वजह से हुआ या सिफारिश फलीभूत हुई। एक ही संतान हो तो माता-पिता सब कुछ उत्कृष्ट ही देना चाहते है और उत्कृष्ट की ही उम्मीद भी करते है। बेटे के भविष्य के लिए उसने अपना सिविल इंजीनियर वाला कैरियर छोड़ दिया। देव ने दबे स्वरों में बरजा था उसे। ज्यादा त्याग करोगी तो ज्यादा आस लगाओगी और निराशा भी उतनी ही होगी। और तो और उमर भर बच्चे को जताओगी कि ये एहसान किया है। और भविष्य फिर भी अपने हाथ में नहीं है। बच्चा कुंठित न हो जाए। पर वो मेरा निश्चय जानते थे कि एक बार ठान लेती हूँ तो फिर पीछे हटना मुश्किल है। इस बात पर बात अक्सर लंबी बहस का रूप ले चुकी है। अपनी सोच अपनी समझ अपने तर्क लगातार चलते। यदयपि बातें दोनों ही सही ही होती पर फिर भी... फिर भी पर आकर उसकी भी सहमति टिक जाती। सही ही कहते है देव कि बच्चे को सहज विकसित होने दो पुष्प की तरह खुशबू बिखेरते हुए ही जीने दो। बेसमय छेड़छाड़ इसको मुरझा देगी। ध्यान रहे कोई पंखुरी ना टूट जाए। पर ...

...उसका ये 'पर' फिर सिर उठा लेता। कितनी रेस है इस युग में ऐसे में वह पिछड़ गया तो? क्या करेगा जिंदगी में? साथियों से पीछे रह जाएगा। आने वाले समय में अपने आपको कमतर पाएगा तो कितना हीन महसूस करेगा और ना जाने किसे दोषी ठहराए? वो स्थिति कितनी अजीब होगी?? तब वह क्या करे पाएगी...???